भारत में बौद्ध धर्म की क्षय

भारत ज्ञान विज्ञान समिति

नव जनवाचन आंदोलन

इस किताब का प्रकाशन भारत ज्ञान विज्ञान समिति ने
'सर दोराबजी टाटा ट्रस्ट' के सहयोग से किया है।
इस आंदोलन का मकसद आम जनता में
पठन-पाठन संस्कृति विकसित करना है।

भारत में बौद्ध धर्म की क्षय	***Bharat Main Bouddh Dharm Ki Kshay***
डी.डी. कोसांबी	**D.D. Kosambi**
हिंदी अनुवाद	***Hindi Translation***
बी.एस. रावत	**B.S. Rawat**
पुस्तकमाला संपादक	***Series Editor***
तापोश चक्रवर्ती	**Taposh Chakravorty**
कॉपी संपादक	***Copy Editor***
जगमोहन 'चोपता'	**Jagmohan 'Chopta'**
रेखांकन	***Illustration***
धीरज सोमवसी	**Dhiraj Somwbasi**
कवर एवं ग्राफिक्स	***Cover & Graphics***
जगमोहन	**Jagmohan**
प्रथम संस्करण	***First Edition***
नवंबर, 2007	**November, 2007**
सहयोग राशि	***Contribution***
20 रुपये	**Rs. 20**
मुद्रण	***Printing***
सन शाइन ऑफसेट	**Sun Shine Offset**
नई दिल्ली - 110 018	**New Delhi - 110 018**
सौजन्य से	***Courtsey***
मार्क्सिस्ट्स डॉट और्ग	**marxists.org**

Publication and Distribution

© Bharat Gyan Vigyan Samiti

Basement of Y.W.A. Hostel No. II, G-Block, Saket , New Delhi - 110 017
Phone : 011 - 26569943, Fax : 91 - 011 - 26569773
Email : bgvs_delhi@yahoo.co.in, bgvsdelhi@gmail.com
website: www. bgvs.org

BGVS NOVEMBER 2007 2K 0020 NJVA 0089/2007

भारत में बौद्ध धर्म की क्षय

डी.डी. कोसांबी

अपनी बात

यह एक हैरत की बात है कि बीसवीं सदी के आखिरी वर्षों से चलकर आज तक जहां एक तरफ विज्ञान की अदभुत खोजों ने सौरमंडल और ब्रह्मांड के गूढ़ रहस्यों और जैव जगत के डी.एन.ए. के विज्ञान की गुत्थियों को सुलझा लिया है, वहीं दूसरी तरफ पढ़े-लिखे, सभ्य लोगों के मुल्क धर्म के नाम पर अन्य मुल्कों के जान और माल की बर्बादी करने में अपनी सेनाएं और राष्ट्रीय सम्पदा बेतहाशा लुटा रहे हैं। क्रिस्तान धर्म के नाम पर अमरीका और गोरे लोगों के दूसरे मुल्क इस्लाम धर्म को मिटाने के लिए ऐसे पैमाने पर राजनैतिक और सामरिक इंतजाम कर रहे हैं जो आज तक के विश्वयुद्धों में ही शायद किया गया था। ये मुल्क जाहिल डिक्टेटरों (तानाशाहों) की बर्बरता के मोहताज नहीं हैं, इन देशों की संस्कृतियां मानवीय हैं। मुल्कों की हुकूमतें बाकायदा अपनी जनताओं से वोट लेकर दूसरे धर्मों पर चढ़ाई करती हैं। यह क्या माजरा है?

हमारे अपने देश में लगातार इस मंदिर या उस मस्जिद पर धावे बोले जाते हैं। मार-काट होती है, और धार्मिक भावना ही जनतांत्रिक चुनावों की बुनियाद बना दी जाती है। इस्लाम, सिख, ईसाई, बौद्ध कोई धर्म नहीं बच पाया है और यह सब आधुनिक भारत में हो रहा है। इस बात पर काफी अफसोस प्रकट किया जाता है। अफसोस ठीक है मगर अफसोस से कोई हल नहीं निकलता। धर्म के नाम पर लड़ाइयां, चढ़ाइयां और नरसंहार कोई ऐसी गहरी बात के लिए होंगे, जो जनतंत्र, सभ्यता, विज्ञान आदि से भी ज्यादा गहरी है।

धर्म की बुनियाद क्या है? धर्म की मान्यताएं? धर्मों की बुनियाद मान्यताएं नहीं हो सकती, क्योंकि कई विद्वानों, और सदपुरुषों ने साबित कर दिया है कि अधिकतर धर्मों की मूल मान्यताएं लगभग एक जैसी हैं– ईश्वर पर विश्वास, नेकी का तकाजा, बुराई का बहिष्कार, प्यार और मुहब्बत की महिमा।

तो क्या धर्म की बुनियाद धर्म के कर्मकांडों, मंदिर-मस्जिद की बनावटों में है? थोड़ी संजीदगी से विचार करने से यह साबित हो जाएगा कि सभी धर्मों के कर्मकांड ऊपरी रूप से अलग-अलग दिखते हुए भी वास्तव में एक जैसे हैं– पवित्र स्थल का विचार, उसकी सफाई, सुंदरता, सुगंध, संगीतमय प्रार्थनाएं, जीवन के हर मोड़ पर किए जाने वाले अनुष्ठान आदि।

तो क्या धर्मों के ईश्वर अलग-अलग हैं? यह बात भी ठीक नहीं है क्योंकि लगभग सभी धर्म यह मानते हैं कि ईश्वर एक है और अलग-अलग धर्म ईश्वर तक पहुंचने के अलग-अलग रास्ते हैं।

अजीब हालत है। एक तरफ धर्म के नाम पर भयानक खून-खराबा भी होता है, और दूसरी तरफ ध्यान से देखने पर सभी धर्म एक जैसे लगते हैं।

साफ है कि धर्मों की बुनियाद कहीं और है– शायद धर्मों से बाहर। यह छोटी-सी किताब इस गहरे रहस्य को कुछ-कुछ समझने में मदद देगी।

यह सबको मालूम है कि ईसा पूर्व 1750 के आस-पास आर्य भाषा-भाषी कबीले भारत आने लगे और यहां बसने लगे। आर्य भाषी कबीलों का धर्म प्रकृति शक्ति के देवताओं पर आधारित था और यह धर्म भारत का भी धर्म बन गया। ईसा पूर्व 800-900 के आसपास लोहे के हल से खेती शुरू हुई, और ईसा पूर्व 500 के आसपास जैन और बौद्ध धर्म नए धर्म के रूप में पैदा किए गए जो आर्य धर्म से अलग थे। बौद्ध धर्म पूरे देश में फैल गया, और देश से बाहर चीन, जापान, बर्मा, दक्षिणपूर्व एशिया से इन्डोनेशिया तक फैल गया। चन्द्रगुप्त, अशोक, हर्षवर्धन जैसे बड़े-बड़े सम्राटों ने इस धर्म को अपनाया। यह धर्म लगभग 1500 वर्षों तक भारत का धर्म रहा। मगर 900-1000 ईसा पश्चात तक आते-आते बौद्ध धर्म बाहरी दुनिया में फला-फूला मगर भारत में मिट गया। क्यों?

यह एक प्रख्यात ऐतिहासिक रहस्य है जिससे कई विद्वान समय-समय पर जूझते रहे हैं। एक ऐसे विद्वान हुए हैं– डी.डी. कोसांबी, जो आधुनिक भारत में इतिहास शास्त्र के जनक माने जाते हैं। इस किताब में उनका इस विषय पर एक महत्वपूर्ण लेख दिया जा रहा है।

इस किताब को पढ़कर हमें भारत में बौद्ध धर्म की क्षय को समझने में मदद तो मिलेगी ही, साथ ही साथ धर्म की बुनियाद और आजकल के धर्मयुद्धों के असली कारणों का भी पता चलेगा।

हम शायद यह भी समझ पाएंगे कि वर्तमान धर्मयुद्ध मानव इतिहास के आखिरी धर्मयुद्ध हैं, क्योंकि ये युद्ध असल में धर्म के मुखौटे लगाए हुए, भौतिक युद्ध हैं और समाज में भौतिक टेढ़ेपन को समाप्त करने के बाद ही ये युद्ध समाप्त होंगे।

संपादक

भारत में बौद्ध धर्म की क्षय

चीनी यात्री ह्वेन सांग (630 ईसा पश्चात) ने अपनी भारत यात्रा के दौरान जब देखा कि, भारत की इस भूमि में बुद्ध की अनेक मूर्तियां क्षत-विक्षत स्थिति में दबी पड़ी हुई हैं तो उसने भविष्यवाणी करते हुए कहा था कि, उस महान शिक्षक द्वारा स्थापित धर्म तथा उनकी शिक्षाएं शीघ्र ही समाप्त हो जाएंगी। बंगाल के शासक शशांक ने बौद्ध

प्रतिमाओं को ध्वस्त कर दिया था। यहां तक कि उस पवित्र बोधिवृक्ष को काटकर जला दिया था, जिसके नीचे बैठकर बुद्ध को 12 सदियां पहले ज्ञान प्राप्त हुआ था।

बाद में सम्राट अशोक के अंतिम वंशज पूमावर्मन ने उस बोधिवृक्ष की एक टहनी का पता लगाया और उसे लगाकर पल्लवित और पोषित किया। इसी प्रकार सम्राट

हर्ष ने बंगाल के शासक शशांक को पराजित करके बौद्ध धर्म से संबंधित नष्ट हुए प्रतिष्ठानों का पुनरूद्धार किया तथा कई नए मठों और विहारों का निर्माण किया। हजारों बौद्धभिक्षु इन्हीं मठों में रहा और पढ़ा करते थे। उच्चस्तरीय शिक्षा प्रदान करने वाला समृद्ध नालंदा विश्वविद्यालय

अपनी प्रतिष्ठा के चरम पर था। सब ठीक लगता था।

क्षति अन्दरूनी कारणों से हुई। धीरे-धीरे बौद्ध धर्म के पतन की शुरुआत होने लगी। चीनी यात्री ह्वेन सांग की

रिपोर्ट की बातें सच साबित होने लगी। हालांकि स्वयं ह्वेन सांग को भी इस बात का भान नहीं होगा कि उसकी भविष्यवाणी इतनी जल्दी सच होगी, जब उन्होंने लिखा था–

"इस काल में, ऐसे बौद्ध विद्वान जो बौद्ध धर्म की पावन रचनाओं की तीन शिक्षाओं की व्याख्या कर सकते

थे, उनकी सेवाओं के लिए विभिन्न प्रकार के सेवकों को नियुक्त किया जाता था। उसे हाथी वाहन दिया जाता था। जो छह शिक्षाओं की व्याख्या करता था उसे सशस्त्र रक्षक दल दिया जाता था। जो सभासद परिमार्जित भाषा में अपने

विचार (तर्क-वितर्क) प्रस्तुत करता था, सघन अध्येयता होता था तथा अपने विषय में माहिर होता था एवं तार्किक होता था, उसे बहुमूल्य आभूषणों से सजे हाथी में बिठाया जाता था। उसके लिए मठों के द्वार सदा खुले रहते थे। इसके विपरीत यदि कोई व्यक्ति अपने तर्कों में असफल हो जाता था, तुच्छ और अश्लील मुहावरों का प्रयोग करता था या तार्किक नियमों की अवह्वेलना करता था तो उसके चेहरे पर लाल तथा सफेद रंग पोत दिया जाता था और उसके शरीर पर धूल तथा मिट्टी का लेप लगा दिया जाता

था। या उसे रेतीली जगह पर गहरे खंदक में छोड़ दिया जाता था। इस प्रकार योग्य और अयोग्य, बुद्धिमान तथा मूर्ख की पहचान की जाती थी।" यह किस हालत के लक्षण थे?

बुद्ध के समय में योग्यता निर्धारण की यह प्रक्रिया नहीं अपनाई जाती थी। हमेशा भ्रमण करने वाले बौद्ध भिक्षुओं का कार्य सरल शब्दों में तथा आम भाषा में धर्मपरायणता (सदाचार-संयम) का प्रसार करना था। समृद्ध मठ उन साधारण ग्रामीणों की चिंता नहीं करते थे जिनके श्रम के उत्पादों पर ही इन मठाधीशों की ऐय्याशी चलती थी, और आडंबरी शास्त्रार्थ होते थे।

बुद्ध द्वारा संचालित नियमों, संयमों और उनके अनुपालन को ध्यान में रखते हुए बौद्ध भिक्षुओं को साधारण वेश-भूषा में रहने की अनुमति थी। उन्हें सोने और चांदी के आभूषणों को छूने तक की मनाही थी। जबकि, बाद में अजंता की बुद्ध मूर्तियों के सिर पर आभूषण दिखाए गए हैं, या उन्हें बहुमूल्य आसन पर बैठा दिखाया गया है!

बौद्ध धर्म के विचारों से प्रभावित होकर ही सम्राट अशोक ने रक्त-पात का रास्ता छोड़ दिया था और वह शांति-प्रिय हो गया था। उसने फरमान निकाल दिया था

कि आगे सेना का उपयोग सिर्फ समारोह और परेड के दौरान ही किया जाएगा। धर्मपरायण सम्राट हर्ष ने बौद्धवाद के साथ किसी तरह अपनी युद्धनीतियों के समाधान की व्यवस्था की थी। उसी तरह वह बाद में भगवान सूर्य और महेश्वर, दोनों का आराधक हो गया था। हर्ष की सेना में उत्तरोत्तर वृद्धि होती गई। उसकी सेना में 60 हजार हाथी, 1 लाख घुड़सवार तथा बड़ी संख्या में पैदल सेना थी। वह बौद्ध था, यहां तक कि उसकी खुद की हत्या करने आया हत्यारा पकड़ा गया, और दरबारी लोग एकत्र होकर उसके लिए मृत्युदंड की सजा की मांग रहे थे, तो सम्राट हर्ष उसे छोड़ देने के हिमायती थे। जबकि आम जनता जो युद्धों में जान देने के लिए मजबूर थी और चाहती थी कि लड़ाइयां

कम लड़ी जाएं, ताकि जन-धन की क्षति न हो हर्षवर्धन का इनसे कोई वास्ता नहीं था।

दूसरे शब्दों में, बौद्धवाद बहुत खर्चीला साबित हुआ। असंख्य मठ और उनमें रहने वाले ऐय्याशों पर, और सैनिकों पर, दोहरी लागत आने लगी। अपने प्रारंभ काल से ही बौद्धवाद एक सार्वभौमिक राजतंत्र के विकास का हिमायती था जो छोटे-मोटे युद्धों को रोकता था। स्वयं बुद्ध चक्रवर्ती थे, वे राजा के अध्यात्मिक प्रतिरूप थे। किंतु ऐसी महान विभूतियों ने जिन साम्राज्यों को चलाया वे बहुत महंगी व्यवस्थाएं साबित हुई। भारत में हर्ष इस प्रकार के अंतिम सम्राट थे। इसके बाद छोटे-छोटे टुकड़ों में राज्यों का विभाजन हो गया। यह प्रक्रिया नीचे से उपजी सामंतवादी व्यवस्था के उदय तक चलती रही। धीरे-धीरे प्रशासन सामंती तंत्र के हाथों में चला गया। इस व्यवस्था का जन्म, भूमि पर संपत्ति के नए उपजे अधिकारों को लेकर हुआ।

गांवों ने साम्राज्यों और उनसे जुड़े संगठित धर्म को खंडित कर दिया। अब अपने में परिपूर्ण गांव उत्पादन तंत्र के मानक बन गए। करों की वसूली मुद्रा के बजाय वस्तुओं में होने लगी क्योंकि खपत भी स्थानीय थी। दूरगामी व्यापार की गुंजाइश कम थी। इसलिए आपसी टकराहट भी नहीं होती थी।

मध्यकालीन भारतीय परिस्थितियों में खाद्य और कच्ची सामग्री को दूरस्थ स्थानों में पहुंचाने के लिए परिवहन की व्यवस्था नहीं थी। सम्राट हर्ष ने अपने पूरे साम्राज्य का भ्रमण किया था, उसके दरबारी और सैनिक भ्रमण में साथ होते थे। चीनी तीर्थ यात्री ने लिखा है कि भारतीय लोग व्यापार में सिक्कों का उपयोग नहीं करते थे। इस काल में वस्तु विनिमय की प्रथा थी। प्रमाण के तौर पर देखा जा सकता है कि हर्ष काल के कोई सिक्के उपलब्ध नहीं हैं। इसके विपरीत मौर्यकालीन पंचमार्का वाले सिक्कों की भरमार पाई जाती है।

प्रारंभ में बौद्धधर्म बहुत सफल रहा, क्योंकि तत्कालीन समाज की आवश्यकताओं की पूर्ति करने में यह सफल रहा। ईसा पूर्व छठी शदी के गांगेय क्षेत्र का समाज अपने में परिपूर्ण शांतिमय गांवों के रूप में संगठित नहीं था। आबादी बहुत कम थी। किंतु वह भी आपस में लड़ते हुए अर्ध जनजातीय प्रदेशों में बंटी हुई थी। कई जनजातियां ऐसी थी जो हल जोतकर कृषि उत्पादन काम नहीं करती थी। वैदिक ब्राह्मणवाद चरागाही संस्कृति वाले आसपास

के पड़ोसी कबीलों के साथ लगातार युद्ध में लगे कबीलों के लिए उपयुक्त था। उभरती कृषि अर्थव्यवस्था के विकास में पशुबलि की प्रथा बाधक हो गई थी। मौर्यपूर्व व्यवस्था में धातु, नमक और कपड़े का व्यापार लंबी दूरी तक अपेक्षित था किंतु सक्षम राज्य के संरक्षण के बिना ऐसा संभव नहीं था। अतः आदिवासी समूहों और सार्वभौमिक साम्राज्य के बीच की दूरी को तय करने के लिए एक नए सामाजिक दर्शन की आवश्यकता थी।

सार्वभौमिक राजतंत्र और सार्वभौमिक समाजिक धर्म समानांतर थे, यह इस बात से साबित हो जाता है कि उसी समय मगध का उदय हुआ। न केवल बौद्धधर्म बल्कि मगध राज्य के कई समकालीन मत– चाहे वे जैन हों, आजीविक हों, सभी वैदिक यज्ञों और पशुबलि का विरोध कर रहे थे। बौद्धधर्म वन्य देश और जंगली आदिवासियों के क्षेत्रों में बढ़ते व्यापार को संरक्षण दे रहा था। प्राचीन व्यापार मार्गों जूनार, कार्ला, नासिक, अजंता के स्मारक और अवशेष इस बात को प्रमाणित करते हैं।

बौद्धधर्म का सभ्यता–निर्माण का काम ईसा की सातवीं शदी तक खत्म हो गया था। अहिंसा का सिद्धान्त सार्वभौमिक रूप से स्वीकार तो कर लिया गया था किंतु व्यवहार में उसका पालन नहीं हो रहा था। वैदिक पशु बलिप्रथा समाप्त हो गई थी। कुछ छोटे–छोटे राज्य इसके अपवाद थे किंतु इन पुनर्जागरणवादी प्रयासों का सामान्य अर्थव्यवस्था पर बहुत कम प्रभाव पड़ रहा था।

अब नई समस्या थी गांवों के किसानों पर अत्यधिक ताकत न इस्तेमाल करते हुए उनको दब्बू बनाए रखने की। इस शिक्षा का काम धर्म ने संभाल लिया। लेकिन बौद्ध धर्म ने नहीं। अब गांवों में वर्ग संरचना जाति के रूप में उजागर होने लगी, और बौद्धधर्म हमेशा जाति से नफरत करता था।

आदिवासी नई उपजातियों में शामिल कर लिए गए। आदिवासी और कृषकवर्ग कर्मकांडों के जंजाल में फंसने लगा, जिसे बौद्धभिक्षुओं ने निषिद्ध कर दिया था। कर्मकांडों पर ब्राह्मणों का एकछत्र अधिपत्य स्थापित हो गया।

इस समय ब्राह्मण पथप्रदर्शक के रूप में सामने आया, और उत्पादन के लिए प्रेरक की भूमिका निभाने लगा। क्योंकि खेतों की जुताई, बीज बोने, तथा फसल उगाने का मुहूर्त कब होगा, आदि इन सबके समय तय करने का पंचाग उनके पास रहता था। पंडित नई फसल और व्यापार की संभावनाओं की विधि बताने लगे। ब्राह्मण उत्पादन पर बोझ नहीं बनता था जैसा कि उसके वैदिक पूर्वज या बौद्धमठों द्वारा किया जाता था। इस काल में बुद्ध को विष्णु का ही अवतार मानकर समझौता किया गया। इसलिए औपचारिक बौद्धधर्म धीरे-धीरे लुप्त होने लगा।

किंतु बौद्धधर्म की महत्वपूर्ण शिक्षा का ह्रास नहीं होना चाहिए– अच्छे विचारों के लिए हर व्यक्ति को अपने दिलो-दिमाग के पोषण और प्रशिक्षण की जरूरत होती है, जैसे अच्छे गायन के लिए गले का रियाज और अच्छी दस्तकारी के लिए हाथों का अभ्यास जरूरी है। लेकिन विचारों का मूल्य और महत्व इस बात पर निर्भर करता है कि उनसे कितनी सामाजिक प्रगति हो पाती है। ●